शोध मंथन Vol. XIV No.III June-Sep. 2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

संगीत में रस का महत्व

प्राप्तिः 26.08.2023
स्वीकृतः 17.09.2023

68

प्रो० सुमन लता शर्मा
निर्देशिका
आर०जी० (पी०जी०) कॉलेज, मेरठ (उ०प्र०)

शिप्रा जैन
शोधार्थी
आर०जी० (पी०जी०) कॉलेज, मेरठ (उ०प्र०)
ईमेलः *bansalvaibhav07@gmail.com*

सारांश

रस को मानव मन के अन्तःकरण की सम्पत्ति कहा गया है। इसी के कारण मानव रसिक या अरसिक कहलाता है। मानव की इन्द्रियां ही रस का संचार करती है। इसलिए हम यह भी कह सकते है। कि रस का संचार भी तभी होता है जब मनुष्य किसी वस्तु से आनन्द प्राप्त करता है। आनन्द का रस से गहरा सम्बन्ध माना गया है। रस को संगीत का प्राण कहा गया है। अगर संगीत में रस ही ना हो तो संगीत का आनन्द श्रोता को नहीं प्राप्त होता है। क्योंकि कलाकार व श्रोता में जो सामंजस्य होता है उसका आधार रस ही है। मानव को एक भावनाशील प्राणी कहा गया है क्योंकि मानव ही एक ऐसा प्राणी है जो अपने मन के भावों को प्रकट करता है। क्योंकि पशु–पक्षी में यह सम्भव नहीं है। बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक मनुष्य अनेक भावों जैसे प्रेम, घृणा, क्रोध, द्वेश तथा ईर्ष्या का सामना करता है। इन सब भावों से वह यथावत् परिचित हो जाता है। यह सभी भाव व्यवहार रस के अन्तर्गत समाहित है।

रस क्या है

संगीत में सुन्दरता की वृद्धि के लिये 'रस' एक आवश्यक तत्व है। इस 'काव्य' का मूल आधार प्राणत्व अथवा आत्मा है। रस का सम्बन्ध 'सृ' धातु से माना गया है, जिसका अर्थ है बहता हुआ अर्थात् जो भाव रूप से हृदय में बहता है, उसे रस कहते हैं।

जब कोई स्वाभाविक वस्तु कुछ परिवर्तित होकर मानव मन के अन्दर एक असाधारण नवीनता उत्पन्न कर देती है तो रस कहलाती है।

रस शब्द पर भारतीय साहित्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण चिंतन हुआ और इसीलिये रस के अनेक अर्थ वर्णित किये गये।

"The term Rasa in Rigveda replies the idea of 'Taste'. In the Upanishads the meaning of Rasa in "life breath or the vital air in the Rasa" later on it came to mean the aesthetic state of bleim. "He is Rasa, having obtained him, the soul becomes full of Flesh."(2)

Rasa at one time meant 'Water', 'Juice' or 'Wine' at another time it implied 'essence'. In another contest it meant 'relish' or savouring. There was a time when it indicated the Primary Constituents of medicine. It also mint 'Aesthetic Pleasure' or 'enjoyment' – a meaning

or association of meanings with which we are essentially concerned. But to really understand this last said implication. It is important to know its other associations. The other possibilities through which it has travelled – for as I said earlier, a word in made up of its journey in time, its association and its context. (5)

अभिनव गुप्त के अनुसार "रस का अर्थ है आनन्द और आनन्द विषयीगत न होकर आत्मसात होता है उनके अनुसार नाट्यादि के सेवन से, भाव की भूमिका से, आत्म विश्रांतमयी आनन्द चेतना ही रस है।"(2)

विभिन्न विद्वानों के अपने–अपने विचार रहे परन्तु प्राचीन ऋषियों ने मानव के जीवन को सरल बना कर उसमें निहित रस को वाणी द्वारा एक स्वरूप दिया और उसके लिए कुछ सिद्धान्त निर्धारित किये। चित्रकार, वास्तुकार, कवि तथा संगीतकार जो भी हो सभी अपनी–अपनी कला में प्राण डालने का प्रयत्न करते हैं, परन्तु इनमें सफलता संगीतकार को ही प्राप्त होती है क्योंकि संगीत की रसात्मक अभिव्यक्ति सूक्ष्म होती है। शिल्पकला हो, मूर्तिकला हो या संगीत कला इनमें जिसके भी उपादान सूक्ष्म होंगे रस की अभिव्यक्ति भी वहीं होगी। जिस प्रकार शिल्पकार के उपादान ईंट, पत्थर, छैनी आदि सूक्ष्म न होकर स्थूल हैं तो यहाँ भावों की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती ठीक इसी प्रकार से चित्रकार भी रेखायें व रंगो की मौन अभिव्यक्ति मन के भावों को मुखरित नहीं कर सकती है परन्तु स्वर एक ऐसा माध्यम है जो मन के भावों को मुखारित कर सकता है। इसलिए भावों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति केवल संगीत या संगीतकार द्वारा ही सम्भव है। भरत ने भावनाओं पर विचार करते हुए रस के मुख्य भागों, स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव तथा व्याभिचारी भावों पर चर्चा की है।

भाव का सर्वप्रथम वर्णन भरत ने अपने ग्रन्थ नाट्यशास्त्र के सप्तम अध्याय में किया है। 'भाव' वह अर्थ है जो विभावों के द्वारा निष्पन्न होता है और वाचिक, आंगिक तथा सात्विक अभिनय रूप अनुभावों के द्वारा गम्य प्रतीति योग्य बनता है, यहाँ भाव से तात्पर्य काव्यार्थ से है।(4)

स्थायी भाव

भावों की बात की जाये तो प्रथम स्थान स्थायी भाव का ही है।

स्थायी भाव समुंद्र की तरह है, जिस प्रकार समुंद्र खारे व मीठे पानी को अपने अन्दर समाहित करता है, ठीक उसी प्रकार स्थायी भाव भी अपने से प्रतिकूल व अनुकूल किसी भी भाव से अलग नहीं है। स्थायी भाव एक मनोवैज्ञानिक दशा है। स्थायी भाव है क्या ? इस पर विचार करना आवश्यक है। जब हम देखते हैं, सुनते हैं या किसी भाव का अनुभव करते हैं तो उसके स्थायी संस्कार धीरे–धीरे हमारे मन में विकसित होते हैं, परन्तु ये संस्कार ज्यादा समय तक स्थिर भी नहीं रह पाते हैं। भरत मुनि ने स्थायी भाव की महत्ता बताई है – जिस प्रकार मनुष्यों में राजा, शिष्यों में गुरू की प्रतिष्ठा होती है उसी प्रकार सभी भावों में स्थायी भाव श्रेष्ठ तथा प्रतिष्ठित होता है। साथ ही साथ भरत ने आठ स्थायी भाव बताये हैं। जो इस प्रकार हैं–

स्थायी भाव	–	**रस**
रति	–	श्रृंगार
ह्रास	–	हास्य
शोक	–	करूण
क्रोध	–	रौद्र
उत्साह	–	वीर

भय	–	भयानक
जुगुप्सा	–	वीभत्स
विस्मय	–	अद्‌भुत
निर्वेग	–	शान्त

स्थायी भाव को ही मुख्य भाव माना गया है।

सर एस0एम0 टैगोर के अनुसार – "Which cannot be hide and which culminates in a raga (Passion) through Vibhav, Anubhav and Sanchari Bhav is called Sthayi (Permanent) Bhavs."(2)

विभाव

रस उत्पत्ति का दूसरा साधन विभाव माना गया है। विभाव क्या है हम इस पर विचार करते हैं। किसी भी भाव के दो पहलू होते हैं, पहला जिसके हृदय में भाव उत्पन्न हुआ तथा दूसरा जिसे देख कर भाव उत्पन्न हुये। वही विभाव कहलाता है।

इसके अतिरिक्त जो वाणी अंग तथा अभिनय के द्वारा विभिन्न भावों का शोध कराते हैं विभाव कहलाते हैं।

"The cause of Sthayi Bhav which other into the composition of any poem or drama are called vibhav."(2)

जिस प्रकार मन में भाव आना तथा जिस को देख कर आना वो दो स्थितियां हैं, ठीक उसी प्रकार विभाव को दो भागों में बांटा गया है –

(1) आलम्बन एवं (2) उद्दीपन।

आलम्बन – जिसका सहारा लेकर भाव उत्पन्न हो आलम्बन कहलाता है। दूसरो शब्दों में यह कह सकते हैं कि "जिन वस्तुओं या विषयों पर आलम्बित हो कर भाव उत्पन्न होते हैं, उन्हें आलम्बन विभाव कहते हैं। इसको हम इस प्रकार भी कह सकते हैं कि किसी व्यक्ति तथा वस्तु के कारण व्यक्ति के मन में जब कोई स्थायी भाव जागृत होता है तो उस व्यक्ति, वस्तु को उस भाव का आलम्बन विभाव कहते हैं।

उदाहरण – यदि किसी के मन में मगरमच्छ को देखकर भय का जो भाव उत्पन्न होता है वही स्थायी भाव का आलम्बन विभाव होता है क्योंकि मगरमच्छ उस व्यक्ति के मन में उत्पन्न भय का आलम्बन विभाव है।

उद्दीपन – मानव में किसी वस्तु या परिस्थिति को देखकर जो भाव उत्पन्न होते हैं, वह उद्दीपन विभाव कहलाता है। उद्दीपन विभाव में चेष्टायें, क्रियायें आदि कई स्थितियां आती हैं।

उदाहरण – कृष्ण मुरली बजाकर आकर्षित करते हैं तो यहाँ मुरली उद्दीपन विभाव है। मानव मन के भाव अधिकतर मन को प्रभावित करते हैं।

अनुभाव – भावों का बोध कराने वाले कारण तथा मानव मन में स्थायी भाव के जागने पर जो शारीरिक चेष्टाएं उत्पन्न होती हैं, वह अनुभाव कहलाती हैं। अनुभाव अधिकतर शारीरिक, मानसिक तथा आंगिक होते हैं। इन्हें भाव उत्पत्ति का सूचक भी माना गया है। कहा जाता है कि विद्वानों ने भी विभाव के अन्तर्गत ही अनुभाव को माना है। अनुभाव में जो शारीरिक विकार दिखते हैं, उनके आधार पर ही अनुभाव को दो भागों में विभाजित किया है।

1) **साप्तिवक –** साप्तिवक अनुभाव वह भाव कहलाते हैं जो मन में आये भाव के कारण स्वयं प्रकट होते हैं। ऐसे शारीरिक विकारों पर आश्रय का कोई वश नहीं रहता अर्थात् आश्रय इनको नहीं रोक पाता है। भरत ने अपने नाट्यशास्त्र में आठ सात्विक प्रकारों का वर्णन किया है।

1. स्तब्ध – प्रसन्नता लड़ना आदि क्रियाओं से शरीर की गति रूक जाना।
2. स्वेद – आश्चर्य या डर से शरीर में पसीना आना।
3. रोमांच – खुशी व प्रसन्नता के कारण रोंगटों का खड़े हो जाना।
4. स्वरभंग – डर के कारण आवाज का नहीं निकलना।
5. कंप – शरीर का कांपना।
6. वैवर्ण्य – चेहरे का रंग उड़ जाना।
7. अश्रु – ऑखों से आँसू का निकलना।
8. प्रलय – सुध–बुध खो देना, चेतनाहीन हो जाना।

2) **कायिक –** शरीर की बनावट जैसे– झपटना, कूदना या हाथ से इशारा करना आदि क्रियायें कायिक अनुभाव कहलाते हैं।

संगीत में रस निशपत्ति भावों के द्वारा ही सम्पन्न होता है। अब हम रस के देवता रंग पर विचार करते हैं। भरत ने आठ रसों के रंग व देवता क्रमश इस प्रकार बताये है –

	रस	रंग	देवता
1.	श्रृंगार	श्याम	विष्णु, कामदेव
2.	हास्य	श्वेत	शिवगण, प्रमथ
3.	रौद्र	लाल	रूद्र
4.	करूण	कपोत	यम
5.	वीर	चमकीला	महेन्द्र
6.	अद्भुत	पीत	ब्रहमादेव, गन्धर्व
7.	वीभत्स	नील	महाकाल
8.	भयानक	कष्ष्ण	काल

रस में स्वरों का महत्व

अगर बात की जाये स्वरों में रस के सम्बन्ध की तो प्रत्येक स्वर का अपना अलग एक रस होता है। विद्वानों के भी भिन्न–भिन्न मत हैं। भरत के अनुसार स्वरों के स्थायी भाव व रस इस प्रकार हैं –

	स्वर	रस	स्थायी भाव
1.	शडज	वीर, अद्भुत, रौद्र	उत्साह, विस्मय
2.	ऋशभ	वीर, अद्भुत, रौद्र	उत्साह, विस्मय, क्रोध
3.	गंधार	करूण	शोक
4.	मध्यम	श्रृंगार, हास्य	रति, ह्रास
5.	पंचम	श्रृंगार, हास्य	रति, ह्रास

6.	धैवत	वीभत्स, भयानक	भय, जुगुप्सा
7.	निशाद	करूण	शोक

पं0 शारंग देव के अनुसार ''सा तथा रे वीर रस, ग तथा नि करूण और म तथा प हास्य एवं श्रृंगार रस की सृश्टि करते हैं।

संगीत मकरंद में 'शडज से निशाद' तक स्वरों में क्रमशः अद्भुत एवं वीर, रौद्र, शान्त, हास्य, श्रृंगार, वीभत्स तथा करूण रस का निर्देश दिया है। इस प्रकार अगर हम बात करें तो प्रत्येक स्वर का रस से जो सम्बन्ध है, अलग–अलग ग्रन्थों में अलग–अलग है। प्राचीन काल में भी जो राग–रागिनी का वर्गीकरण किया गया था वो भी रस के अनुकूल किया गया था। जैसे कि पुरूष राग के लिए वीर रस, स्त्री राग के लिए श्रृंगार रस माना गया था। यहाँ तक कि शुद्ध व विकृत स्वरों में रसों का प्रभाव अलग–अलग है, लेकिन वीभत्स रस का प्रयोग संगीत में बहुत कम होता है।

लय तथा ताल का रस से सम्बन्ध

संगीत में ताल व लय के बिना रस का होना असम्भव है। कहाँ जाता है शब्द चाहे कम हों परन्तु ताल और लय का होना रस के लिए आवश्यक है। संगीत में भिन्न प्रकार की तालें हैं जो आठ रसों में समाहित हैं। इसी प्रकार रस की निष्पत्ति के लिए लय भी अपना विशिष्ट स्थान रखती है। जहाँ चौताल सूल आदि वीर रस, तीन ताल दादरा श्रृंगार रस तथा करूण रस की परिचायक है, वहीं मध्य तय में हास्य तथा श्रृंगार रस, विलम्बित लय में करूण, वीभत्स व भयानक और द्रुत लय रौद्र व अद्भुत रसों की परिचायक है। यहाँ तक कि डा0 अरूण कुमार सेन ने यह स्वीकार किया है कि ताल विहीन संगीत करूण रस को प्रदर्शित करता है।

प्राचीन सन्दर्भ ग्रन्थों से प्राप्त निष्कर्ष के आधार पर नौ रसों की उत्पत्ति किन–किन तालों तथा किस लयकारी में हो सकती है, इसको तालिका द्वारा स्पष्ट करते हैं–

क्र० सं०	रस	ताल	लय/गति
1.	श्रृंगार	दादरा, रूपक, कहरवा	मंद तथा कोमल लय/गति
2.	करूण	रूपक, दादरा	विलम्बित लय
3.	वीर	चारताल, आडाचार ताल, सूलताल आदि	द्रुत लय
4.	भयानक	धमार, चारताल	मध्य लय
5.	हास्य	प्राचीन एकताल, चक्रताल और द्रुत कहरवा	विषम गति
6.	रौद्र	चारताल, धमार ताल	अतिद्रुत लय तथा प्रचंण गति
7.	वीभत्स	अनियमित मात्राओं वाली कोई भी सम, विषम ताल	संकोच गतियुक्त अनियंत्रित लय
8.	अद्भुत	कुंभताल, गजझंम्पा ताल, तीनताल आदि	आश्चर्य गति, लड़खड़ाती लय
9.	शांत	एक ताल व झूमरा ताल	स्थिर या अचंचल गति

वाद्यों का रस से सम्बन्ध

वाद्य अपनी आवाज के द्वारा ही रस की उत्पत्ति करते हैं। जो वाद्य मोटी आवाज के होते हैं वह गम्भीर रस उत्पन्न करते हैं। जैसे कि वीणा, सारंगी, वायलिन आदि तथा जो वाद्य पतली व मधुर आवाज उत्पन्न करते हैं वो श्रृंगार रस के परिचायक होते हैं। जैसे कि सितार, शहनाई, बासुंरी इत्यादि। इसी प्रकार झॉझ, मंजीरे, करताल, घंटे आदि भक्ति रस के परिचायक हैं। युद्ध के समय दुंदुभि, भेरी,

शंख, नगाड़ा, ड्रम आदि वीर तथा रौद्र रस के द्योतक हैं। कुछ वाद्यों का तालिका द्वारा स्पष्टीकरण निम्न प्रकार है –

रस	वाद्य
श्रृंगार	सितार, शहनाई, बांसुरी, ढंप, ढोलक, तबला आदि
करूण रस	सारंगी, वीणा, वायलिन आदि
रौद्र, वीर रस	मृदंग, पखावज, भेरी, शंख, नगाडा आदि

इस प्रकार प्रत्येक वाद्य अपना एक अलग रस लिये हुए है।

बंदिश द्वारा रस

किसी भी राग की बन्दिश अलग–अलग रस को प्रभावित करती है। क्योंकि एक ही राग में भिन्न–भिन्न शब्दो व बन्दिशों से भिन्न–भिन्न रसों की अभिव्यक्ति होती है।

उदाहरण –

श्याम कल्याण –

''खेलत आंगन नंद लाल
चंचल चरण चपल पड़े,
बेहाल हो ललना।''

इसमें वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति होती है।

पायल मेरी बाजे रे सजना
कैसे आऊं तोरे मदरवां।

यह बन्दिश श्रृंगार रस की अभिव्यक्ति कर रहा है।

जाने दे री मोहे श्याम सुन्दर
मिलन की सूरत लागी।

यह भक्तिपूर्ण रस को अभिव्यक्त किये हुए है।

राग मालकॉस –

श्रृगांर – मुख मोड़–मोड़ मुस्कात जात।

वीर – भेरी बजी संग्राम की।

करूण – हम खोज–खोज गये हार।[2]

इस प्रकार स्पष्ट है कि जब एक राग में श्रृंगार, वीर, वात्सल्य, करूण की बन्दिशें मिले तो उस राग को हम निश्चित ही किसी एक रस की सीमा में नहीं बांध सकते हैं।

निष्कर्षतः कहने का यही अभिप्राय है कि राग, ताल, स्वर, लय, रचना तथा वाद्य इन सभी के सम्मिलित प्रभाव से ही संगीत में रस प्रवाहित होता है। इन सब से जो हृदय में आनन्द की प्राप्ति होती है वह रसानुभूति है। हम कह सकते हैं कि रस का संगीत में अपना एक अलग ही महत्व है। संगीत में भाव का होना आवष्यक है और भाव से ही रस की अनुभूति होती है।

संसार में सब कुछ रस ही रस है। इस रसात्मकता की आधारशिला है श्रोता की सहृदयता और श्रोता व कलाकार के बीच एकरूपता। जिस प्रकार दूध में दही, तिल में तेल और चमकते पत्थर में अग्नि

समाहित है, ठीक उसी प्रकार संगीत में रस है। यदि कलाकार प्रस्तुति तो श्रृंगार रस की दे रहा हो तथा श्रोताओं को वीर और हास्य रस की अनुभूति हो तो यह रसानुभूति न होकर रस का मिथ्या भास है। अतः संगीत के प्रत्येक कण–कण में रस समाया हुआ है।

सन्दर्भ

1. वर्मा, डा० सतीश. (2004). संगीत चिकित्सा. राधा पब्लिकेशनः दिल्ली. पृष्ठ 72.
2. शर्मा, प्रो० स्वतन्त्र. (2004). सौन्दर्य रस एवं संगीत. प्रतिभा प्रकाशनः दिल्ली. पृष्ठ 95, 99, 105, 107 व 126.
3. जैन, विजय लक्ष्मी. (1989). संगीत दर्शन. राजस्थानी ग्रन्थसारः जोधपुर. पृष्ठ 55.
4. Snehi, Dr. Shikha., Saraswat, Akanksha. U.G.C. Net. Arihant Publication. Pg. **40.**
5. Pataik, Priyadarshi. (2020). Rasa in Aesthetics. D.K. Print World Pvt. Ltd. Pg. **13.**
6. https://saptswargyan.com.